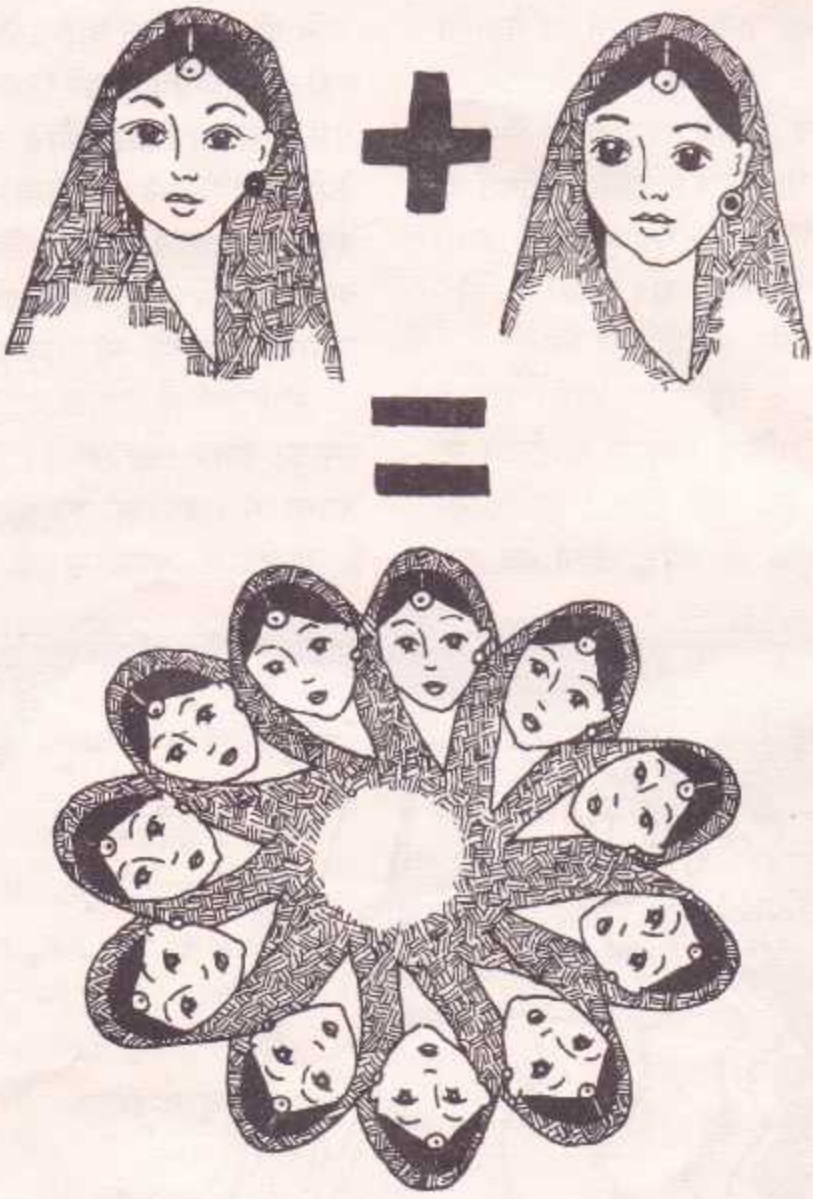

एक-एक से ग्यारह भले

जुही

रमजान की झोपड़ी से जोर-जोर से चीखने की आवाज आ रही थी। 'बचाओ, मार दिया।' 'अरे कोई तो आओ, मेरी मदद करो।' पूरे गांव ने सुना पर रमजान की मदद को कोई नहीं आया। हर औरत को लग रहा था कि मार उसे ही पड़ रही है, पर बाहर निकलने का साहस कोई नहीं जुटा पा रही थी। श्यामा ने हिम्मत करके अपने पति से कहा भी, "देखो, जाकर सलीम को रोको, रमजान बेचारी मर जाएगी।" पर उसका पति उल्टा उस पर ही चिल्लाने लगा। "चुप बैठ, वरना तुझे भी दो हाथ दूंगा खींच के। ज्यादा वकालत करने चली है।" बेचारी श्यामा चुपचाप रह गई।

रोज का सिलसिला

रानीपुर गांव में यह किस्सा कोई पहली बार नहीं हुआ था। यह रोज़ की ही बात थी। आज रमजान पिटी थी, कल राजी का उसके मर्द ने सर फोड़ दिया था। कल न जाने किस पर कहर बरपेगा। रोज किसी न किसी औरत के सर पर पट्टी बंधी होती। या फिर किसी के बदन पर नील होते। किसी के हल्दी-चूना लगा होता, तो कोई लंगड़ा कर चल रही होती।

करें भी तो क्या?

औरतें एक दूसरी का दुख समझती थीं। मिलकर आपस में सेंक-पोंछ और दवा-दारू करतीं। एक-दूसरी को ढांढस बंधातीं। वे और कर भी क्या सकती थीं। किसी के पास खाने को नहीं होता तो मिल-बैठकर उसे खाना खिलातीं। साझे दुखों ने उन्हें एक दूसरी के साथ एक गहरे रिश्ते में बांध दिया था। उनमें एकता और सहारा देने की भावना थी।

गांव के मर्द मुखिया मज़दूरी करने पास की मिल में जाते। पैसे कमाते। शाम ढले ठर्रा पीकर झूमते हुए घर आते, जुआ खेलते। बीवी-बच्चों के साथ मार-पीट करते। गाली-गलौज करते। खरटि लेकर सोते। और औरतें रात भर बेचारी सिसकती रहतीं। सुबह फिर रोटी-पानी, चारा-लकड़ी के चक्कर में सब भूल जातीं। अपनी किस्मत का दोष मानकर घुट-घुट जीती रहतीं।

आशा की किरण

गांव के मास्टर जी के बेटे का ब्याह हुआ। शहर से पढ़ी लिखी बहू आई। यह गांव के लिए बहुत बड़ी बात थी। गांव की लड़कियां पढ़ती नहीं थीं। स्कूल में पढ़ने को लड़के ही जाते थे। लड़कियों का पढ़ना-लिखना बुरा माना जाता था। मास्टर जी ने बहुत कोशिश की थी, पर लोग टस से मस नहीं हुए थे।

मास्टर जी की बहू ऊषा मोटी-मोटी किताबें पढ़ती। अखबार पढ़ती। मास्टर जी के साथ

देश-विदेश की बड़ी-बड़ी बातों पर तर्क-वितर्क करती। और तो और, स्कूल जाकर बच्चों को भी यदा-कदा पढ़ा देती।

पानी भरने कुएं पर जाती तो औरतों से बोलने-चालने की कोशिश करती। उन्हें शहर के बारे में बताती। नई जानकारी देती। दुख-तकलीफ में उन्हें दवा-दारू, रुपए-पैसे और प्यार से सहारा देती। कुछ ही समय में उसने सबसे रिश्ता बना लिया। कोई मामी बनी, कोई चाची, कोई दादी तो कोई भाभी। सब औरतें उसे खूब प्यार-सम्मान देतीं। उन्हें अब लगता वह भी उनके जैसी ही है। पहले सब उसे घमंडी, बुरी समझती थीं, अब वही उसकी तारीफ करते नहीं अघाती थीं।

पहली बैठक

जिस दिन रमजान की पिटाई हुई उस दिन ऊषा अपने पति के साथ पास के गांव में शादी पर गई थी। दूसरे दिन सुबह उसे खबर लगी। फौरन रमजान के घर पहुंची। उसकी देखभाल की। रमजान के हाथ की हड्डी टूट गई थी।

फिर सुझाव दिया। आज हम सब दोपहर को अपना काम खत्म करके उसके घर मिलेंगी। अपना सुख-दुख बांटेंगी। और सोचेंगी कि इस रोज की परेशानी से कैसे निपटा जाए।

दोपहर होते ही सब ऊषा के घर पहुंचीं। सबके मन में एक ही बात थी। कब तक सहेंगी ये सब। हम कोई जानवर तो नहीं हैं। हमें भी जीने का हक़ है। ऐसा अत्याचार अब बिलकुल बर्दाश्त नहीं करना है। बस, फैसला हो गया। मिलकर मुकाबला करेंगे।

जैसे को तैसा

शाम हुई। दारू में झूमते-गाते मर्द आए। किसी भी औरत ने अपने घर का दरवाजा नहीं खोला। आदमियों ने खूब शोर मचाया। गाली-गलौज की। दरवाजे पर लातें-डंडे बरसाए पर औरतें तो जैसे बहरी हो गई थीं। श्यामा के पति ने किसी तरह दरवाजा तोड़ दिया। बाल पकड़कर श्यामा को बाहर लाने के लिए बढ़ा ही था कि श्यामा ने डंडे से उसकी जमकर पिटाई की। पति को यह उम्मीद नहीं थी। उसका सारा नशा काफूर हो गया।

एक की पिटाई क्या हुई। सब थोड़े हैरान हो गए। मास्टर जी के घर पहुंचे। अपना दुखड़ा रोया। पर मास्टर जी ने कोई भी मदद से साफ इंकार कर दिया। खैर, किसी तरह रात गुजरी। भूखे-प्यासे सुबह फिर काम पर निकल गए। शाम लौटे तो फिर वही हाल। बस, सब आग-बबूला हो गए। फिर मास्टर जी के पास पहुंचे। फैसला कराने की बात रखी।

सब औरतों को बुलाया गया। औरतों ने अपनी मांगें सामने रखीं। हमारे साथ मारपीट नहीं होगी। जो मर्द शराब पीकर आएगा उसे घर में नहीं घुसने दिया जाएगा।

मर्दों ने वचन दिया। मारपीट नहीं करेंगे। दारू नहीं पीएंगे। हाथ जोड़ सबने औरतों से माफी मांगी।

और वे जीत गईं

अगले दिन सब औरतें फिर ऊषा के घर मिलीं। अपनी जीत पर खुश थीं। वह चूंकि आपस में एक थीं इसलिए उनमें एक नई ताकत का एहसास था। उन्हें मालूम हो गया था अपना हक कैसे पाना है। सबकी आंखों में आंसू थे। खुशी के। गम के नहीं। और ऊषा, उसने तो जैसे अपनी पढ़ाई आज पूरी की थी। □